राजस्थान उच्च न्यायालय

जयपुर बेंच

एस.बी. सिविल द्वितीय अपील संख्या 314/1998

1. राजस्थान राज्य सड़क परिवहन निगम अपने प्रबंध निदेशक, परिवहन मार्ग, जयपुर के माध्यम से।

2. क्षेत्रीय प्रबंधक (तकनीकी अभियंता) आरएसआरटीसी, जयपुर।

3. मुख्य प्रबंधक (डी), आरएसआरटीसी, जयपुर।

4. अध्यक्ष, आर.एस.आर.टी.सी., जयपुर

----प्रतिवादी-अपीलकर्ता

बनाम

1. भंवर सिंह राठौर पुत्र श्री बच्चन सिंह राठौर (अब मृत) अपने कानूनी उत्तराधिकारियों के माध्यम से

1/1. श्रीमती ओम कंवर पत्नी स्वर्गीय श्री भंवर सिंह राठौड़, निवासी ग्राम दूधगानी तहसील नागौर (राजस्थान)

1/2. रतन सिंह पुत्र स्वर्गीय श्री भंवर सिंह राठौड़, निवासी ग्राम दूधगानी तहसील नागौर (राजस्थान)

1/3. अमर सिंह पुत्र स्वर्गीय श्री भंवर सिंह राठौड़, निवासी ग्राम दूधगानी तहसील नागौर (राजस्थान)

1/4. राजू सिंह पुत्र स्वर्गीय श्री भंवर सिंह राठौड़, निवासी ग्राम दूधगानी तहसील नागौर (राजस्थान)

1/5. प्रेम कंवर पुत्री स्वर्गीय श्री भंवर सिंह राठौड़, निवासी ग्राम दूधगानी तहसील नागौर (राजस्थान)

----उत्तरदाता (एस)

अपीलकर्ता(ओं) के लिए : सुश्री मंजीत कौर

उत्तरदाता(ओं) के लिए : कोई नहीं.

माननीय न्यायमूर्ति श्री अशोक कुमार जैन

<u>निर्णय / आदेश</u>

<u>रिपोर्ट योग्य</u>

<u>28/02/2024</u>

1. विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश संख्या 5, जयपुर नगर, जयपुर द्वारा पारित नियमित

(29/05/2025 को सुबह 11:48:42 बजे डाउनलोड किया गया)

सिविल अपील संख्या 142/1990 में दिनांक 28.11.1997 के निर्णय से व्यथित होकर तत्काल द्वितीय अपील प्रस्तुत की जाती है, जिसके द्वारा विद्वान अतिरिक्त मुंसिफ संख्या 3, जयपुर नगर, जयपुर द्वारा पारित सिविल वाद संख्या 565/1987 में दिनांक 15.12.1989 के निर्णय एवं डिक्री से व्यथित वर्तमान अपीलकर्ता-प्रतिवादियों द्वारा प्रस्तुत अपील को खारिज कर दिया गया था तथा दिनांक 15.12.1989 के निर्णय एवं डिक्री की पुष्टि की गई थी।

2. मामले के तथ्य यह हैं कि उत्तरदाता भंवर सिंह राठौर ने इस आधार पर घोषणा के लिए एक दीवानी मुकदमा दायर किया था कि उन्हें 15.04.1979 को मूल क्षमता में ड्राइवर के रूप में नियुक्त किया गया था। बाद में, अपीलकर्ता ने आदेश संख्या 183 दिनांक 21.06.1982 द्वारा उन्हें सेवा से मुक्त कर दिया और अपीलीय प्राधिकारी के आदेश संख्या 1191 दिनांक 22.03.1983 द्वारा इसकी पुष्टि की। आगे की समीक्षा संख्या 352 दिनांक 02.02.1985 द्वारा खारिज कर दी गई और वादी ने इन सभी आदेशों को प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत का पालन न करने के आधार पर दीवानी न्यायालय में चुनौती दी। अपीलकर्ता-प्रतिवादी द्वारा एक लिखित बयान प्रस्तुत किया गया जिसमें दावे और वाद में वर्णित तथ्यों का खंडन किया गया। इसके अलावा, यह दावा किया गया कि वादी के कदाचार के आधार पर उसे आरोप-पत्र (ज्ञापन) जारी किया गया था और विभागीय जाँच, सुनवाई का अवसर और नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत के सम्यक पालन के बाद, प्रतिवादियों द्वारा बर्खास्तगी आदेश पारित किया गया था। दीवानी वाद की पोषणीयता पर इस आधार पर आपत्ति उठाई गई कि बर्खास्तगी और रोजगार संबंधी विवाद औद्योगिक विवाद के दायरे में आते हैं, इसलिए केवल औद्योगिक न्यायाधिकरण या श्रम न्यायालय को ही इस विवाद पर निर्णय देने का अधिकार है। दीवानी वाद की पोषणीयता पर गंभीर आपत्ति उठाई गई।

3. दलीलों के आधार पर निम्नलिखित मुद्दे तैयार किए गए और निम्नानुसार पढ़े गए:-

1- आया वादी का सेवा पृथक्करण आदेश क्रमांक 183 दिनांक 21.06.1982, अपीलीय अधिकारी का आदेश क्रमांक 1191 दिनांक 22.03.1983 तथा रिव्यू अधिकारी का आदेश क्रमांक 352 दिनांक 02.02.1985 अवैध है?

2- क्या कोर्ट को पेश किया गया वाद-विवाद सुनने का अधिकार नहीं है?

3 - आया वाद का मूल्यांकन सही नहीं किये जाने एवं पूर्ण न्यायालय शुल्क अदा नहीं करने से वाद चलने योग्य नहीं है?

(29/05/2025 को सुबह 11:48:42 बजे डाउनलोड किया गया)

4- दादरसी?"

4. वादी ने अपने दावों के समर्थन में स्वयं परीक्षण किया, जबकि अपीलार्थी-प्रतिवादी द्वारा डीडब्ल्यू1-कंचन सिंह का परीक्षण किया गया। विद्वान विचारण न्यायालय ने बहस पूरी करने के बाद, वाद-विवाद संख्या 1 को आंशिक रूप से वादी के पक्ष में और वाद-विवाद संख्या 2 और 3 को प्रतिवादियों के विरुद्ध निर्णीत किया। जिसके परिणामस्वरूप, मामले में निम्नलिखित आदेश पारित किया गया।

"परिणामतः आदेश दिया जाता है कि वादी का वाद प्रतिवादीगण के विरूद्ध आंशिक रूप से डिक्री किया जाता है। प्रतिवादीगण का आदेश क्रमांक 183 दिनांक 21.06.82 एवं अपीलीय अधिकारी का आदेश क्रमांक 1191 दिनांक 22.03.83 अवैध, गैर कानूनी, अप्रभावी व प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के विपरीत होने के कारण शून्य एवं निरस्त घोषित किया जाता है एवं घोषणा की जाती है कि वादी इस निर्णय के बाद ड्यूटी ज्वाईन करने के दिनांक से वेतन संबंधी लाभ पाने का अधिकारी बन सकेगा। मुकदमें की परिस्थितियों को देखते हुए वाद व्यय पक्षकारान अपना-अपना वहन करेगें।"

5. उपरोक्त से व्यथित होकर, अपीलकर्ता-प्रतिवादियों द्वारा सी.पी.सी. की धारा 96 के अंतर्गत अपील प्रस्तुत की गई, जो 28.11.1997 को खारिज कर दी गई और निचली अदालत के निर्णय एवं डिक्री की पुष्टि की गई। निचली अदालतों के समवर्ती निष्कर्षों के पश्चात, सी.पी.सी. की धारा 100 के अंतर्गत तत्काल अपील प्रस्तुत की जाती है।

6. इस अपील के लंबित रहने के दौरान भंवर लाल की मृत्यु हो गई है और उनके कानूनी प्रतिनिधियों को रिकॉर्ड में दर्ज कर लिया गया है। 21.05.2012 को, निम्नलिखित महत्वपूर्ण कानूनी प्रश्नों पर द्वितीय अपील स्वीकार कर ली गई।

1. क्या मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर यह वाद सिविल न्यायालय द्वारा स्वीकार योग्य नहीं था?

2. क्या मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर, वाद की समय सीमा समाप्त हो चुकी थी, विशेष रूप से इस तथ्य को देखते हुए कि कानून में अपीलकर्ताओं के कर्मचारियों पर लागू समीक्षा का कोई प्रावधान नहीं है?

3. क्या मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर वादी-उत्तरदाता उस अवधि के लिए पिछला वेतन पाने का हकदार नहीं था,

(29/05/2025 को सुबह 11:48:42 बजे डाउनलोड किया गया)

जिसके दौरान उसने अपीलकर्ताओं के अधीन काम नहीं किया था?

7. अपीलकर्ताओं के विद्वान वकील ने राजस्थान राज्य सड़क परिवहन निगम एवं अन्य बनाम जाकिर हुसैन के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर भरोसा करते हुए, जैसा कि एआईआर ऑनलाइन 2005 एससी 996 में रिपोर्ट किया गया था, प्रस्तुत किया कि पक्षों के बीच विवाद एक औद्योगिक विवाद था और सिविल कोर्ट के पास सिविल मुकदमे को सुनने और उस पर विचार करने का कोई अधिकार नहीं था। उन्होंने यह भी प्रस्तुत किया कि उत्तरदाता-वादी को निगम में प्रचलित स्थायी आदेश के अनुसार नियुक्त किया गया था और उनकी सेवाओं को स्थायी आदेशों में निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार समाप्त कर दिया गया था। उन्होंने यह भी प्रस्तुत किया कि वादी स्थायी आदेशों से बंधा हुआ था क्योंकि स्थायी आदेश नियोक्ता और कर्मचारी के बीच सेवा नियम के रूप में काम करता है। उन्होंने विशेष रूप से इस तथ्य का उल्लेख किया कि बर्खास्तगी का आदेश 21.06.1982 को पारित किया गया था और सिविल मुकदमा 01.05.1987 को दायर किया गया था उन्होंने यह भी दलील दी कि निचली अदालत ने अपने आदेश में स्पष्ट रूप से कहा है कि 02.02.1985 का पुनर्विचार आदेश वादपत्र और साक्ष्य के साथ दाखिल नहीं किया गया था। उन्होंने दलील दी कि निचली अदालत ने वादी के दीवानी मुकदमे को स्वीकार करते हुए कानून के सिद्धांतों की अनदेखी की, इसलिए विद्वान निचली अदालत द्वारा पारित निर्णय और डिक्री कानून की नज़र में गलत है। उन्होंने यह भी दलील दी कि अपीलीय अदालत ने भी अपीलकर्ताओं द्वारा उठाए गए आधारों की अनदेखी की है, इसलिए अपील स्वीकार किए जाने योग्य है और निचली अदालतों के निर्णय और डिक्री को रद्द किया जाना आवश्यक है।

8. उत्तरदाताओं की ओर से कोई उपस्थित नहीं है। हमने वादी की दलीलों को उत्तरदाताओं की ओर से लिखित प्रस्तुतियाँ माना है।

9. अपीलकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना गया और अभिलेख का अवलोकन किया गया। साथ ही, अपीलकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा संदर्भित माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर भी विचार किया गया।

10. इस न्यायालय ने कानून के तीन महत्वपूर्ण प्रश्नों पर अपील स्वीकार कर ली है और हमने इन प्रश्नों पर अपीलकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ताओं की दलीलों पर विचार किया है:-

"मुद्दा संख्या 1- क्या मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर यह मुकदमा

(29/05/2025 को सुबह 11:48:42 बजे डाउनलोड किया गया)

सिविल न्यायालय द्वारा स्वीकार योग्य नहीं था?"

11. राजस्थान राज्य सड़क परिवहन निगम एवं अन्य बनाम ज़ाकिर हुसैन (सुप्रा) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने विभिन्न निर्णयों पर विचार किया है और यह टिप्पणी की है कि वादी (कर्मचारियों) को औद्योगिक विवाद अधिनियम के तहत प्रदान किए गए उपायों का सहारा लेना चाहिए था, क्योंकि सिविल न्यायालय को वाद पर विचार करने और उस पर विचार करने का अधिकार नहीं है। उत्तरदाताओं (कर्मचारियों) ने वाद प्रस्तुत करने में सद्भावनापूर्वक कार्य नहीं किया है।

12. हाल ही में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने सौ रजनी बनाम सौ स्मिता एवं अन्य सिविल अपील संख्या 5216/2022 (एसएलपी(सी) संख्या 1580/2021 से उत्पन्न) के मामले में धूलाभाई एवं अन्य बनाम मध्य प्रदेश राज्य एवं अन्य के निर्णय का उल्लेख करते हुए एआईआर 1969 एससी 78 और रमेश गोबिंदराम (मृत) बनाम सुगरा हुमायूं मिर्जा वक्फ के माध्यम से 2010 (8) एससीसी 726 में रिपोर्ट किया कि यहां तक कि उन मामलों में जहां सिविल न्यायालय का अधिकार क्षेत्र किसी क़ानून द्वारा वर्जित है, परीक्षण यह निर्धारित करना है कि क्या क़ानून के तहत गठित प्राधिकरण या न्यायाधिकरण के पास राहत देने की शक्ति है जो सिविल न्यायालय सामान्य रूप से उनके समक्ष दायर मुकदमों में प्रदान करते हैं।

13. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने राजस्थान एसआरटीसी बनाम बाल मुकुंद बैरवा मामले (2009) 4 एससीसी 299 के निर्णय का हवाला देते हुए यह माना कि यह अनुमान है कि सिविल न्यायालय के पास अधिकार क्षेत्र है। बाल मुकुंद बैरवा (सुप्रा) के मामले में, ज़ाकिर हुसैन (सुप्रा) के मामले में दिए गए निर्णय पर पीठ ने विचार किया।

14. राजस्थान राज्य सड़क परिवहन निगम एवं अन्य बनाम कृष्णकांत आदि आदि के मामले में विरोधाभासी निर्णय के बाद, जिसकी रिपोर्ट 1995 (5) एससीसी 75 में की गई थी और राजस्थान एसआरटीसी एवं अन्य बनाम खादरमल की रिपोर्ट 2006 (1) एससीसी 59 में की गई थी, औद्योगिक विवाद अधिनियम और औद्योगिक रोजगार (स्थायी आदेश) अधिनियम, 1947 पर विचार करने के बाद बाल मुकुंद बैरवा (सुप्रा) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय की एक बड़ी पीठ और तीन न्यायाधीशों की पीठ को एक संदर्भ दिया गया था, जिसमें निम्नानुसार टिप्पणी की गई थी:-

> "प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उद्देश्य न्याय की त्रुटि को रोकना है और इसलिए इसका पालन निष्पक्ष कार्रवाई की व्यावहारिक

(29/05/2025 को सुबह 11:48:42 बजे डाउनलोड किया गया)

आवश्यकता है।

ऐसे मामले में जहां कोई जांच नहीं की गई है, वैधानिक विनियमन के साथ-साथ भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 में निहित समानता के अधिकार का उल्लंघन होगा। ऐसी स्थिति में, यह घोषित करने के उद्देश्य से एक सिविल मुकदमा बनाए रखने योग्य होगा कि सेवा की समाप्ति अवैध थी और इसके परिणाम क्या थे। हालांकि, हम यह जोड़ना चाह सकते हैं कि यदि किसी कर्मचारी द्वारा अधिकार के उल्लंघन का आरोप लगाते हुए मुकदमा दायर किया जाता है और औद्योगिक विवाद अधिनियम या प्रमाणित स्थायी आदेशों के तहत नियोक्ता की ओर से एक समान दायित्व है, तो सिविल मुकदमा नहीं हो सकता है। हालांकि, अगर वैधानिक विनियमन द्वारा निर्धारित किसी प्रक्रिया का पालन नहीं किया गया है या सामान्य कानून या प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के तहत भी अनिवार्य नहीं है, जो अधिकार मौजूदा कानून के तहत उत्पन्न हुआ है, प्रीमियर ऑटोमोबाइल्स लिमिटेड (सुप्रा) में निर्धारित कानून के पैराग्राफ 23 के उप-पैरा (2) प्रबल होगा।

इस न्यायालय की यह धारणा कि ऐसे सभी मामले केवल औद्योगिक विवाद अधिनियम या उससे संबंधित कानूनों के अंतर्गत आएंगे और इस प्रकार, सिविल न्यायालय का क्षेत्राधिकार वर्जित होगा, हमारी राय में, प्रीमियर ऑटोमोबाइल्स लिमिटेड (1976) 1 एससीसी 496 की सही व्याख्या नहीं हो सकती है, जो कि तीन न्यायाधीशों की पीठ का निर्णय है और धुलाभाई (सुप्रा) के बाद आया है, जो कि एक संविधान पीठ का निर्णय है, जो हमारे लिए बाध्यकारी है।

हम यह भी देख सकते हैं कि कृष्णकांत (सुप्रा) में भावी अधिनिर्णय के सिद्धांत का अनुप्रयोग सही नहीं भी हो सकता है क्योंकि या तो न्यायालय के पास अपेक्षित क्षेत्राधिकार होता है या नहीं होता। यह विधि का सुस्थापित सिद्धांत है कि न्यायालय क्षेत्राधिकार प्रदान नहीं कर सकता जहाँ कोई क्षेत्राधिकार ही नहीं है और न ही पक्षकार सहमति से न्यायालय को क्षेत्राधिकार प्रदान कर सकते हैं। यदि कोई

(29/05/2025 को सुबह 11:48:42 बजे डाउनलोड किया गया)

न्यायालय बिना क्षेत्राधिकार के किसी मामले का निर्णय करता है, जैसा कि जाकिर हुसैन (2005) 7 SCC 447 में ए.आर. अंतुले (1988) 2 SCC 602 में इस न्यायालय के सात-न्यायाधीशों की पीठ के निर्णय के आलोक में सही ढंग से इंगित किया गया है, तो वह अमान्य होगा और इस प्रकार, भावी अधिनिर्णय का सिद्धांत ऐसे मामलों में लागू नहीं होगा। अन्यथा भी भावी अधिनिर्णय के सिद्धांत का अनुप्रयोग सीमित है। यह सामान्यतः वहाँ लागू होता है जहाँ किसी क़ानून को अधिकार-बाह्य घोषित किया जाता है, न कि ऐसे मामले में जहाँ डिक्री या आदेश किसी ऐसे न्यायालय/न्यायाधिकरण द्वारा पारित किया जाता है जिसके संबंध में उसका कोई क्षेत्राधिकार नहीं था। [देखें सी. गोलक नाथ एवं अन्य बनाम पंजाब राज्य एवं अन्य। (एआईआर 1967 एससी 1643)] एम.ए. मूर्ति बनाम कर्नाटक राज्य और अन्य [(2003) 7 एससीसी 517] में, इस न्यायालय ने माना:

"...यह इस न्यायालय पर निर्भर है कि वह यह बताए कि क्या विचाराधीन निर्णय भविष्य में लागू होगा। दूसरे शब्दों में, कोई भविष्य में लागू होने वाला निर्णय नहीं होगा, जब तक कि विशेष निर्णय में ऐसा संकेत न दिया गया हो। यह मानना उचित नहीं है कि किसी विशेष मामले में निर्णय भविष्य में लागू होने वाले निर्णय के सिद्धांत के अनुप्रयोग द्वारा भविष्य में लागू होगा। ....."

(अशोक कुमार सोनकर बनाम भारत संघ एवं अन्य [(2007) 4 एससीसी 54] भी देखें) जैसा कि न्यायमूर्ति कार्डोज़ो ने अपने प्रसिद्ध व्याख्यानों के संकलन - न्यायिक प्रक्रिया की प्रकृति - में बताया है, अधिकांश मामलों में, निर्णय पूर्वव्यापी होगा। केवल जहाँ कठिनाई बहुत अधिक हो, वहाँ पूर्वव्यापी प्रभाव को रोका जाता है। विधि की घोषणा, जब की जाती है, तो सामान्यतः संबंधित मामले के तथ्यों पर लागू होती है।

इसलिए, हम अपने समक्ष प्रस्तुत विधि के प्रश्न का उत्तर देते हैं और प्रत्येक मामले के तथ्यों पर विचार के लिए मामलों को खंडपीठ के समक्ष रखा जाए।"

(29/05/2025 को सुबह 11:48:42 बजे डाउनलोड किया गया)

15. इस प्रकार, वादपत्र में दिए गए निर्णयों और कथनों पर विचार करते हुए, दीवानी वाद पूर्णतः वर्जित नहीं है, बल्कि प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत के उल्लंघन के सीमित आधारों पर ही स्वीकार्य है। अभियोक्ता-1-भंवर और अभियोक्ता-1-कंचन सिंह के अभिलेखों में उपलब्ध साक्ष्यों से संकेत मिलता है कि निचली अदालत ने क्षेत्राधिकार के मुद्दों पर विचार किया है, लेकिन अपीलकर्ताओं के विरुद्ध निर्णय दिया है। राजस्थान एसआरटीसी बनाम बाल मुकुंद बैरवा (सुप्रा) मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ का निर्णय यह निष्कर्ष निकालने के लिए पर्याप्त है कि प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत के उल्लंघन के मामले में, दीवानी न्यायालय को सीमित आधारों पर दीवानी वाद पर विचार करने का क्षेत्राधिकार है। इस प्रकार, इस मुद्दे का उत्तर नकारात्मक में दिया जाता है और अपीलकर्ताओं के विरुद्ध निर्णय दिया जाता है।

मुद्दा संख्या **2-** क्या मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर, वाद की समय सीमा समाप्त हो चुकी थी, विशेष रूप से इस तथ्य को देखते हुए कि कानून में अपीलकर्ताओं के कर्मचारियों पर लागू समीक्षा का कोई प्रावधान नहीं है?

16. अपीलकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता ने इस तथ्य का उल्लेख किया कि वादी ने सिविल न्यायालय के समक्ष खारिजी, अपील और समीक्षा के आदेश को चुनौती दी थी, लेकिन वह समीक्षा का आदेश प्रस्तुत करने में विफल रहा है और ट्रायल कोर्ट ने भी इस तथ्य को विवादित निर्णय में देखा था, लेकिन वह सीमा के मुद्दे पर विचार करने में विफल रहा था।

17. शिकायत और लिखित बयान के अवलोकन से पता चलता है कि वादी ने दावा किया था कि उसकी सेवाएं आदेश संख्या 183 दिनांक 21.06.1982 के अनुसरण में समाप्त कर दी गई थीं और अपील आदेश संख्या 1191 दिनांक 22.03.1983 के तहत खारिज कर दी गई थी। उन्होंने यह भी दावा किया कि निगम के अध्यक्ष को प्रस्तुत किया गया उनका पुनरीक्षण आवेदन भी आदेश संख्या 352 दिनांक 02.02.1985 के तहत खारिज कर दिया गया था। इस प्रकार, उन्होंने प्रार्थना की कि सभी तीन आदेशों को अवैध और शून्य घोषित किया जाए। उपरोक्त के जवाब में, विशेष रूप से लिखित बयान के पैरा संख्या 4 में, अपीलकर्ता-प्रतिवादी ने स्वीकार किया था कि वादी द्वारा दायर अपील और पुनरीक्षण आवेदन पर सुनवाई का अवसर दिए जाने के बाद दोनों को खारिज कर दिया गया था। जवाब में स्पष्ट रूप से इस तथ्य को स्वीकार किया गया है कि एक पुनरीक्षण आवेदन दायर किया गया था और वादी द्वारा दावा की गई तिथि पर निगम द्वारा उसे खारिज कर दिया गया था। अपीलकर्ता निगम ने अपने लिखित बयान में एक शब्द भी यह नहीं कहा

(29/05/2025 को सुबह 11:48:42 बजे डाउनलोड किया गया)

कि वाद पर समय-सीमा लागू है। निगम के लिखित बयान के पैरा संख्या 4 को देखते हुए, अपीलकर्ता प्रतिवादी निगम समय-सीमा का प्रश्न नहीं उठा सकता, इसलिए इस मुद्दे का उत्तर नकारात्मक में दिया जाता है और अपीलकर्ता के विरुद्ध निर्णय दिया जाता है।

"मुद्दा संख्या 3-क्या मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, वादी-उत्तरदाता उस अवधि के लिए पिछला वेतन पाने का हकदार नहीं था, जिसके दौरान उसने अपीलकर्ताओं के अधीन काम नहीं किया था?"

18. विचारण न्यायालय के फैसले के अवलोकन से स्पष्ट है कि आरोपित डिक्री के अनुसरण में केवल कार्यभार ग्रहण करने की तिथि से ही वादी वेतन और अन्य परिलब्धियों का हकदार था। कहीं भी, उत्तरदाता-वादी के पक्ष में पिछला वेतन नहीं दिया गया, इसलिए, अपीलकर्ता इस तथ्य को स्थापित करने में विफल रहा है कि ट्रायल कोर्ट ने वादी को पिछला वेतन दिया है। दीपाली गुंडू सुरवासे बनाम क्रांति जूनियर अध्यापक महाविद्यालय (डी.एड.) और अन्य (2013) 10 एससीसी 324 और यू.पी. स्टेट ब्रासवेयर कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम उदय नारायण पांडे (2006) 1 एससीसी 479 और राजस्थान एसआरटीसी बनाम श्री फूलचंद एआईआर 2018 एससी 4534 के मामले में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि किसी कर्मचारी की बर्खास्तगी/समाप्ति आदेश को रद्द करने के परिणामस्वरूप न्यायालय द्वारा उसे पिछला वेतन अधिकार के रूप में नहीं दिया जा सकता। इस प्रकार, इस मुद्दे का उत्तर भी नकारात्मक है तथा अपीलकर्ताओं के विरुद्ध निर्णय दिया गया है।

19. उपर्युक्त पर विचार करने के पश्चात्, मेरा यह सुविचारित मत है कि अपीलकर्ता इस न्यायालय द्वारा विरचित विधि के उपरोक्त सारवान प्रश्नों को सिद्ध करने में असफल रहे हैं। अतः अपील विफल है और खारिज किए जाने योग्य है।

20. परिणामस्वरूप, दिनांक 28.11.1997 के निर्णय से व्यथित होकर तत्काल द्वितीय अपील दायर की जाती है तथा दिनांक 15.12.1989 का निर्णय एवं डिक्री एतद्द्वारा खारिज की जाती है।

21. लागत के संबंध में कोई आदेश नहीं।

22. तदनुसार डिक्री तैयार की जाएगी।

(अशोक कुमार जैन),जे

अरुण/496

(29/05/2025 को सुबह 11:48:42 बजे डाउनलोड किया गया)

"अस्वीकरण- इस निर्णय का अनुवाद स्थानीय भाषा में किया जा रहा है, एवं इसका प्रयोग केवल पक्षकार इसको समझने के लिए उनकी भाशा में कर सकेगे एवं यह किसी अन्य प्रयोजन में काम नहीं ली जायेगी। सभी अधिकारिक एवं व्यवहारिक उद्देश्यों के लिए उक्त निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही विश्वसनीय माना जायेगा एवं निश्पादन एवं क्रियान्वयन में भी उसी को उपयोग में लिया जायेगा।"

Tarun Mehra
Advocate

(29/05/2025 को सुबह 11:48:42 बजे डाउनलोड किया गया)